© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 08 , Issue : 04 | October - December 2022

वैदिक वास्तु एवं स्थापत्य: भवन निर्माण के विशेष संदर्भ में

डॉ शोभा मिश्रा,
सहायक प्राध्यापक, (इतिहास)
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय सांध्य कालीन अध्ययन विभाग,
द मॉल, शिमला

शोध संक्षेप:-

वैदिक साहित्य विश्व का प्राचीनतम ज्ञान विज्ञान का स्रोत है। वैदिक वांग्मय में अनेकों ऐसे विवरण और संदर्भ में मिलते हैं जिनके आधार पर हम यह कह सकते हैं कि तत्कालीन समाज पशुपालकों कबायलियों का नहीं अपितु सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक रूप से सुगठित समाज था। अब तक मान्य ऐतिहासिक काल क्रमानुसार इस की पूर्ववर्ती सिंधु सरस्वती सभ्यता नगर प्रधान सभ्यता थी और वैदिक सभ्यता ग्राम्य थी,यह एक प्रकार से सभ्यता के विकास चक्र को उल्टा घुमाने के समान है। स्थापत्य और वास्तु के प्राचीनतम पुरातात्विक साक्ष्य सिंधु सरस्वती सभ्यता से मिलते हैं वही प्राचीनतम साहित्यिक स्रोत वैदिक साहित्य है। सिंधु सरस्वती सभ्यता की लिपि यदि पढ़ ली जाती है तो संभवतः ऐसी पुष्टि हो जिसमें वैदिक एवं सैंधव संस्कृति को समकालीन माना जा सकता हैं, जिसमें नगर भी थे और ग्राम भी। वैदिक वांग्मय में अनेकों ऐसे तथ्य और विवरण है जो ग्राम, नगर की संरचना, गृह निर्माण, दुर्ग निर्माण, वेदिका, तोरण, यूप, यज्ञ वेदी, चिति आदि के निर्माण की बात करते हैं। वैदिक निर्माण के ये अनेकों लक्षण बाद के युग में भी व्यवहारित होते रहे हैं और आज भी हो रहे हैं।

मूल शब्द:- वैदिक वास्तु, स्थपति, वास्तोस्पति, वास-गृह, यूप, स्कम्भ

प्रस्तावना-

मानव समाज के विकास के साथ ही कला का विकास और उन्नयन होता रहा है। ईसा पूर्व 8 से 10 हज़ार वर्ष पूर्व मानव ने सामाजिक जीवन में रहना सीख लिया था, वह कृषि कार्य, पशुपालन और स्थाई निवास बनाकर समूह में रहने लगा था। मानव की सांस्कृतिक विकास के प्राचीनतम पुरातात्विक साक्ष्य स्थापत्य और वास्तु के रूप में सिंधु सरस्वती सभ्यता से मिलते हैं वहीं प्राचीनतम साहित्यिक साक्ष्य वैदिक साहित्य से प्राप्त होते हैं। यह भी अद्भुत है कि पुरातात्विक साक्ष्यों से संबंधित युग की लिपि पढ़ी नहीं जा सकी है और साहित्यिक उल्लेख के रूप में उपलब्ध प्राचीन स्थापत्य के साक्ष्य व विधियां पुरातात्विक रूप से उपलब्ध नहीं है। यद्यपि एक सीमा तक यह दोनों साक्ष्य एक दूसरे के पूरक है परंतु फिर भी विद्वानों में इन दोनों सभ्यताओं को एक और समकालीन मानने पर विवाद है। आधुनिक मतानुसार वेद

की संहिता और उत्तरवर्ती वैदिक साहित्य का काल 1500 से 600 ईसा पूर्व तक माना जा सकता है। संभवतः इसी काल में कृषि में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ घने जंगल काटे गए कृषि का विस्तार हुआ और अन्न का अत्यधिक उत्पादन होने लगा इसी कारण इस समय आसंदीवंत, कारौती, (शतपथ ब्राह्मण 13.5.4.2; 9.5.2.15) माशनार (ऐतरेय ब्राह्मण 8.23.2), कौशांबी और परीचक्रा (शतपथ ब्राह्मण, 13.5.4.7) जैसे नगरों का विकास हुआ।[1]

संप्रति हस्तिनापुर, आलमगीरपुर, नोह, अतरंजीखेड़ा, बटेसर आदि स्थान वैदिक कालीन माने जाते हैं, यह सब स्थान कुरु पांचाल प्रदेश में है।[2]

पर्सी ब्राउन का कहना है कि भारतीय स्थापत्य वैदिक युग में विभिन्न चरणों से गुजरते हुए विकसित हो रहा था।[3] राधा कुमुद मुखर्जी के मतानुसार वैदिक वास्तु कला का प्रादुर्भाव धार्मिक कर्मकांड से जुड़ा हुआ है, जिसमें स्थापत्यविदों ने यज्ञ वेदिका एवं यज्ञशाला के निर्माणसूत्रपात किया था,[4] जिनके विस्तृत विवरण शुल्ब सूत्रों में मिलते हैं। यज्ञ धार्मिक अनुष्ठान के महत्वपूर्ण अंग थे। चिति या यज्ञ वेदी का निर्माण इस दृष्टि से महत्वपूर्ण था, प्रारंभ में यज्ञ वेदी का निर्माण मिट्टी, भूसे और गोबर से होता था किंतु बाद में इसको बनाने में कच्ची और पक्की ईंटों का प्रयोग होने लगा।[5] यह वेदियां वृत्ताकार, वर्गाकार, त्रिभुजाकार या श्येनचिति (गरुड़ पक्षी) और अन्य पक्षियों के आकार की होती थी । अथर्ववेद (7.8.8) में इनके निर्माण विधि का विस्तृत उल्लेख है जिसके अनुसार एक वेदिका को ईंट की पांच परतों द्वारा बनाया जाता था। प्रत्येक परत में 200 या कुल मिलाकर 1000 ईटों का प्रयोग किया जाता था। वेदिका के ऊपर आच्छादन हेतु फूस की कई परतों वाले छप्पर का प्रयोग किया जाता था, जिसे बनाने में वंश या बांस का जाल, कायकधनि या रस्सी का उल्लेख मिलता है।[6] यही यज्ञ वेदियां कालांतर में विकसित होते होते हिंदू मंदिर निर्माण की अग्रदूत सिद्ध हुई।

पुरातात्विक प्रमाण के रूप में - समतल भूमि पर बनी यज्ञ तथा नाग पूजा वेदियां और उनके ऊपर बने हुए छप्परों के चित्र हमें सांची, मथुरा, गांधार, अमरावती आदि के स्तूप फलकों पर देखने को मिलते हैं।[7] इसी प्रकार वैदिक कालीन कुटिया निर्माण की परंपरा हमें मौर्य एवं मौर्यकालीन स्तूपों पर निर्मित उत्कीर्ण कला में दिखती है।[8]

कालांतर में, काष्ठ निर्मित वृत्ताकार झोपड़ियों पर आधारित चैत्यों का विकास हुआ उदाहरणार्थ - मौर्यकालीन बैराट का चैत्य, लोमश ऋषि और सुदामा गुफा। लौरिया नंदनगढ़ के शवाधान वैदिक कालीन वास्तुकला पर प्रकाश डालते हैं, यहां से उत्खनित सामग्री से प्राप्त एक स्वर्ण पत्र पर नग्न नारी मूर्ति की पहचान वैदिक मातृ देवी से की गई है। डॉ कुमार स्वामी लौरिया नंदनगढ़ के शवाधानों का समय आठवीं या सातवीं शताब्दी ईसा पूर्व रखते हैं (कुमार स्वामी ए के, हिस्ट्री ऑफ इंडियन एंड इंडोनेशियन आर्ट, पृष्ठ-

© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 08 , Issue : 04 | October - December 2022

10)। कौशांबी में हुए उत्खनन में श्री जी आर शर्मा ने श्येनचिति की पहचान की है। हस्तिनापुर को श्री बी बी लाल ने उत्तर वैदिक कालीन संस्कृति से समीकृत किया है।

वैदिक साहित्य में भौतिक समृद्धि के सूचक अनेक कलात्मक अभिप्राय, शिल्प और निर्माण के उल्लेख प्राप्त होते हैं। बाद के युग में स्थापत्य और वास्तु शास्त्र से संबंधित और भी ग्रंथ लिखे गए जिनका आधार वैदिक साहित्य में उल्लिखित प्रणालियों से था। प्राचीन भारतीय साहित्य में लगभग 177 वास्तु ग्रंथों की रचना हुई जिनमें से कुछ है - बृहदसंहिता, मानसार, मयमत, समरांगण सूत्रधार, विष्णुधर्मोत्तरपुराण, शिल्परत्नसार, विश्वकर्मीय प्रकाश, अग्नि पुराण, मत्स्य पुराण, कामिकागम, अंशुभेदागम, सुप्रभेदागम, रूपमंडन आदि।

गृह निर्माण के योग्य उपयुक्त भूमि को वेदों में वास्तु कहा गया है। समरांगण सूत्रधार के अनुसार वसु या पृथ्वी से उत्पन्न वास्तु है। वे सभी रचनाएं जो पृथ्वी पर स्थित है उनको वास्तु कहा गया है। वास्तु शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा की वस् धातु से मानी जा सकती है जिसका अर्थ है बसना या निवास करना। इसी वस् धातु से वास, आवास, वसति, बस्ती आदि शब्दों का निर्माण हुआ है।[9]

वास्तु शब्द का पर्यायवाची स्थापत्य 'स्थ' धातु तथा 'पति' प्रत्यय की संधि से बना है। 'स्थ' धातु का अर्थ स्थित या स्थिर रहना है, इसी शब्द से स्थिर, स्थावर, स्थिति, स्थान आदि शब्दों का जन्म हुआ है। निवास स्थान भी स्थिर अवस्था में रहते हैं इसीलिए उसका निर्माणकर्ता 'स्थपति' कहलाया गया। वैदिक साहित्य में विश्वकर्मा जो कि ब्रहमा जी की संतान है वह समस्त कलाओं के जनक माने गए हैं।[10] ऋभु, त्वष्ट्रा एवं वास्तोस्पति को कुशल शिल्पी कहा जाता था। इन्होंने इंद्र के लिए कई वस्तुएं के साथ-साथ वज्र का भी निर्माण किया था।[11] तक्षक ऐसे व्यक्ति को कहा जाता था जो लकड़ी, पत्थर या ईंटों को मोटे या पतले आकार में भवन निर्माण की आवश्यकता अनुसार काटता था। जैन ग्रंथों में इन्हें 'वत्थुपढाकार' और पाली ग्रंथ जातकों में इन्हें 'वत्थुविजाकार' कहा गया है।[12]

अश्वालायन गृहयसूत्र (II.7.6-8) तथा गोभिल गृहयसूत्र (II.7.5-6) वास्तुविद्याचार्य द्वारा भूमि चयन, भूमि पूजन, नीव पूजन, स्तंभ एवं द्वार पूजन और गृह प्रवेश संबंधी कर्मकांड की बात करते हैं।[13]

ऋग्वेद के दशम मंडल के हारे जुआरी के प्रसंग में दूसरे के घर में शरण प्राप्त किया हुआ जुआरी वहां की सुख समृद्धि देखकर पश्चाताप करता है (ऋग्वेद X. 34.10-11)।[14] इसी प्रकार ऋग्वेद से अनेकों ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब आर्य स्थाई निवास हेतु देवताओं से प्रार्थना करते हैं। उनके गृहों को स्थायित्व, आरोग्य और समृद्धि से जोड़ा गया है। यह मंत्र ऋग्वेद के प्राचीनतम मंडलों में से हैं।

द्वितीय मंडल में इंद्र से मित्र एवं निवास की प्रार्थना की गई है (ऋग्वेद II.11.14)

तृतीय मंडल में गृह और भोजन की प्राप्ति की प्रार्थना है । (ऋग्वेद, III.11)

© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 08 , Issue : 04 | October - December 2022

पांचवें मंडल में विश्व देव से रत्न और मकान की प्रार्थना की गई है (ऋग्वेद V. 48. 3)

छठे मंडल में अग्नि से धन पुत्र और निवास की प्रार्थना की गई है (ऋग्वेद VI. 15 .3) छठे मंडल में उषा से सुंदर गृह की प्राप्ति की प्रार्थना की गई है । (ऋग्वेद VI. 54. 2)

सातवें मंडल में अश्विन और से यज्ञ व निवास स्थान की प्रार्थना की गई है (ऋग्वेद VII.88.5), सहस्त्र द्वार युक्त घर की प्रार्थना की है 'सहस्त्र द्वारम जमगा गृहम ते' और वरुण से सुंदर निवास स्थान की प्रार्थना की गई है (ऋग्वेद VII. 88 . 6)।

आठवें मंडल में वृहत एवं अविनाशी गृह की प्रार्थना की गई है। (ऋग्वेद VIII. 5.12) आठवें मंडल में गृह पाठकों के रूप में अश्विनी का आवाहन किया गया है (ऋग्वेद VIII.9.11)

ऋग्वेद में घर के लिए गृह, दम, सदन, क्षय, पुर, क्षर्दि इत्यादि नामों का प्रयोग है और *वास्तोस्पति* नामक देवता से मकानों की सुरक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की गई है।[15]शतपथ ब्राहमण में *रत्नविंशी* नामक धार्मिक अनुष्ठान का उल्लेख है जिसमें राजा मरुतों को हवि ग्रामणि के घर जाकर प्रदान करता था।

गृह निर्माण से पहले भूमि का मापन किया जाता था जिसके लिए *निमित* या *मित* शब्दों का प्रयोग हुआ है (अथर्ववेद 9,3,19)। भूमि की माप के लिए पैरों से चलकर लंबाई - चौड़ाई निश्चित की जाती थी और शंकु से निशान लगा लिए जाते थे। घर का मुख्य द्वार प्रधानतया उत्तर दिशा में रखा जाता था। (उदीची वै मनुष्ययाणाम दिक् तस्मात उदिचीनवंश सदो भवति, शतपथ ब्राहमण 3.6.1.23) घर के लिए गृह, हर्म्य शब्दों का प्रयोग हुआ है। साधारण घर पारिवारिक जनों के निवास के लिए बनाए जाते होंगे, वही बड़े विशालभवनों का भी निर्माण होता था जिनमें अजिर, (आंगन) सभा, आस्थान मंडप(बैठक), पत्नी सदन या अंतःपुर, अग्निशाला, देव गृह, पशुशाला या गोष्ठ बनाया जाता था। इन्हें वृहत्मान कहा गया है (वृहंतम मानम वरुण स्वाधव:), उपनिषदों में महाशाला शब्द का भी प्रयोग है। संभवतः छोटे घरों को शाला कहते थे।[16]

ऋग्वेद में ऐसे विशाल भवनों का उल्लेख है जिनमें हजार द्वार या हजार स्तंभ होते थे और तीन मंजिले भवन भी होते थे। इनके लिए क्रमशः 'सहस्त्रद्वार', 'सहस्त्रस्थूण' (ऋग्वेद I.41.15) और 'त्रिधातुशरणम' शब्दों का प्रयोग है।[17]

डॉ वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि सभा एवं समिति संस्थाओं की बैठक का आयोजन इसे सभा मंडप में होता होगा। कई स्थान पर गृहों के लिए पृथु, सम्प्राप्य, मोही, वृहत, उरु, दीर्घ, गंभीर जैसे शब्दों का प्रयोग भी हुआ है जिससे लगता है कि यह बड़े आकार वाले घर थे ।[18] वरुण के घर को अत्यंत विस्तृत एवं सहस्त्र द्वारों वाला 'सहस्त्र द्वारम' (ऋग्वेद, VII.88.5) कहा गया है।[19]

निर्माण सामग्री- वैदिक युग में यद्यपि लकड़ी का प्रयोग अधिक होता था पर अन्य सामग्री भी कुछ सीमा तक प्रयोग की ही जाती होगी।[20] अथर्ववेद के शाला सूक्त (9.3; 3.12) से पता चलता है कि

© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 08 , Issue : 04 | October - December 2022

भवन निर्माण से पहले ही लकड़ी का पर्याप्त प्रबंध कर लिया जाता था। बड़े-बड़े प्रसादों का निर्माण भी लकड़ी से ही होता था इसी कारण से उनके चिन्ह अब शेष नहीं रहे हैं। पाषाण के प्रयोग प्रारम्भ होने पर भी पूर्ववर्ती काष्ठ का प्रयोग परम्परानुसार किया जाता रहा जिसके प्रमाण पश्चिमी भारत के चैत्य गृहों और गुफाओं से प्राप्त होतें हैं जब निर्माणकर्ताओं ने आवश्यकता न होने पर भी पाषाण के साथ-साथ वातायनों, गवाक्षों और छत के निर्माण में काष्ठ की धरनियों और बडेरियों का भी प्रयोग किया है। मिट्टी, पत्थर, लकड़ी, बांसों का प्रयोग सामान्यतया घर के निर्माण में प्रयोग होते थे। नींव मजबूत बनाई जाती थी जिसके लिए *ध्रुव* शब्द का प्रयोग किया गया है। सर्वप्रथम आवासीय भूमि में लकड़ी के चार स्तंभ गाड़े जाते थे जिन्हें *'उपमित'* की संज्ञा दी गई है। उन पर किनारों पर जो धरनें लगती थी उन्हें *'प्रतिमित'* कहा जाता था तथा बीच में लगी तिरछी बडेरियाँ *'परिमित'* कहलाती थी।[21] घर की दीवाल के लिए पक्ष शब्द का इस्तेमाल किया गया है। दीवाल बांस और लकड़ी के लठ्ठों द्वारा निर्मित की जाती थी, इनके बीच में चिकनी मिट्टी में भूसे, पुआल, घास आदि सानकर भर दिए जाते थे। घरों को द्विपक्षा, चतुष्पक्षा, षटपक्षा, अष्टपक्षा या दशपक्षा अर्थात् दो, चार, छ्ह, आठ, दस दीवालों वाले घरों के नाम से जानते थे ।[22] छत के लिए *छर्दि* शब्द का प्रयोग किया गया है। उसके ऊपर साबुत और चिरे बांसों को आड़ा तिरछा बिछा दिया जाता था, अच्छी प्रकार से मूंज की मोटी रस्सी (परिषवन्जल्य) से बांध दिया जाता था उनके ऊपर वर्हण (सरपत, पत्ते, तिनके आदि) का बिछावन किया जाता था।[23]

आकार- प्रारंभ में घर बहुधा गोलाकार ही बनते थे। गंगा घाटी के अति प्राचीन नगर राजगृह के घर गोलाकार पाए गए हैं। बराबर की पहाड़ी में सुदामा की गुफा की बाहरी दीवाल पर गोलाकार गृह अंकित है जिसकी बाहरी दीवाल पर बांस के लट्ठे का आकार स्पष्ट रूप से अंकित देखा जा सकता है। पर्सी ब्राउन के अनुसार आरंभिक अवस्था में वैदिक लोग इसी प्रकार की झोपड़ियों में रहते थे इनका आकार गोल होता था जिनका निर्माण बाँसों की लचीली टहनियों से बांधकर किया जाता था। गोल दीवालों के ऊपर पत्तों की सहायता से गोलाकार छत बनाई जाती थी। बाद में यह झोपड़ियां ढोलाकर या अंडाकार बनाए जाने लगी और उनके ऊपर मोड़े हुए बाँसों को डालकर ढोलकार छत बनायी जाने लगी। विकास क्रम में तीन-चार झोपड़ियों को पास-पास बनाकर उनके बीच एक आंगन जैसा निकाला जाने लगा और छत को सहारा देने के लिए लकड़ी के तख्तो या लठों की सहायता ली जाने लगी। घरों की दीवारें कच्ची ईंटों की भी बनाई जाती थी। *दुरोण* और *दुर्यसु* शब्दों से पता चलता है कि उनमें द्वार भी होते थे, जिससे घरों को सुरक्षा हेतु बंद भी किया जा सकता था और वह दो पल्ले वाले होते थे इसीलिए उन्हें द्वार कहा गया।(ऋग्वेद VII.85.6)[24]

ढोल के आकार की छतों से आगे चलकर वाले चाप या आर्च का विकास हुआ।[25] अथर्ववेद में एक स्थान पर घर की उपमा सुसज्जित हथिनी से दी गई है (अथर्व. 9.3.17)।[26] घर की छत हथनी की पीठ

© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS
Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 08 , Issue : 04 | October - December 2022

की तरह ढलवाँ होती थी। घरों के बाहरी और भीतरी दीवाल पर सफेद चूने से या गेरू से आकर्षक चित्र बनाए जाते थे। इसी प्रकार स्वच्छ व सुंदर घर की तुलना सुसज्जित वधू से की गई है ('वधूमिव ते शाले', अथर्व. 9.3.25)।[27]

अथर्ववेद के शाला सूक्त (9.3; 3.12) में घर के आंतरिक भागों का उल्लेख मिलता है। घर के लिए सदन शब्द का भी प्रयोग किया गया है, सदन के सामने एक बैठक होती थी जिसके लिए *सदस* शब्द का प्रयोग किया गया है, इसी से सदस्य बना है। सदस कक्ष आकार में अन्य कक्षों से बड़ा होता था। आंतरिक कमरों के लिए पत्नी सदन शब्द का प्रयोग भी मिलता है। अथर्ववेद में इसे 'पत्नीनाम सदन' कहा गया है जिससे घरों में स्त्रियों के विशेष कक्ष बनाने का पता चलता है।[28] हविर्धान (हविष्य अन्न का भंडार), अग्निशाला, देवनाम सदन (देवों का स्थान) का भी नाम मिलता है। अग्नि और जल के स्थानों का भी अलग अलग उल्लेख है।[29] तैत्तरीय आरण्यक में *धनधानी* शब्द का प्रयोग मिलता है संभवत है इसका उपयोग कोषागार के रूप में होता होगा (तैत्तिरीय आरण्यक 10.67)। इन घरों में आंगन चौकोर होते थे और उनके चारों और बरामदे और बरामदे के भीतर कोठरियां बनी होती थी। भवन के समीप ही पशुओं का बाड़ा होता था कभी-कभी आंगन में भी निजी पशुओं को बांधने का स्थान होता था।

घर की कामना समृद्धि ,सौंदर्य और आनंद के लिए की जाती थी। पृथ्वी कुमार अग्रवाल के अनुसार मंत्रों में बार-बार घर की स्थापना को सुख- समृद्धि, धन-धान्य, प्रजा, कृषि आदि विविध भौतिक आकांक्षाओं का केंद्रीय भूत स्थल मानकर जीवन के महान सौभाग्य का स्रोत बताया गया है।[30]

उपसंहार-

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि भवन निर्माण या प्रसाद के निर्माण के संबंध में वैदिक साहित्य से प्रचुर सामग्री प्राप्त होती है। वैदिक युग में ही भवन निर्माताओं ने निर्माण के उन पक्षों का आविष्कार कर लिया था जो ऐतिहासिक युग में भी गृह निर्माण में पाए जाते हैं जैसे नींव, कोठे, पक्ष, द्वार, स्तंभ, वातायन आदि। वैदिक काल में साधारणतया घरों का विन्यास मुख्यतः तीन भागों में बांटा था पहला भाग जिसमें पशुओं के रहने का स्थान था पशु गोष्ठ, दूसरा आस्थान या बैठक और तीसरा स्त्रियों का स्थान या अंतःपुर। इसी प्रकार बड़े घरों में कुछ अन्य भाग जैसे देवस्थान इत्यादि भी बनाए जाते थे। गृहस्थ जब अपनी शाला बनवाता था तो प्रार्थना करता था कि यह शाला दृढ़ नींव, गोमती, पयस्वती, अश्ववती, घृतवती, ऊर्जस्वती और सूनृतावती बनकर महान सौभाग्य देने वाली हो।

"इहैव ध्रुवा प्रति तिष्ठ शाले अश्ववती गोमती सूनृतावती।
ऊर्जस्वती घृतवती पयस्वती उच्छ्रयस्व महते सौभगाय ।।" **(अथर्ववेद 3.12.2)**

संदर्भ सूची:-

1- ओमप्रकाश, '*प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास*', वाइली ईस्टर्न लिमिटेड, नई दिल्ली, 1986. पृष्ठ - 81,

2- घोष ए; '*द सिटी इन अर्ली हिस्टोरिकल इंडिया*', शिमला, 1973. पृष्ठ 5- 11,

3- बाजपेई, के. डी.,'*भारतीय वास्तु कला का इतिहास*', उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ, 2015. पृष्ठ संख्या-41,

4- मुखर्जी, आर .के.,'*हिंदू सिविलाइजेशन*', भाग 2, बॉम्बे,1989. पृष्ठ संख्या 324,

5- मुखर्जी, आर .के., '*हिंदू सिविलाइजेशन*', वही .पृष्ठ संख्या 324,

6- अग्रवाल वासुदेव शरण, '*भारतीय कला*' , पृथ्वी प्रकाशन, वाराणसी, 2015, पृष्ठ -52,

7- ब्राउन पर्सी, '*इंडियन आर्किटेक्चर बुद्धिस्ट एंड हिंदू*', ,बॉम्बे,1965, पृष्ठ - 63

8- ब्राउन पर्सी, '*इंडियन आर्किटेक्चर बुद्धिस्ट एंड हिंदू*', वही, पृष्ठ -3

9- उपाध्याय,यू एन; एवं गौतम तिवारी, '*भारतीय स्थापत्य एवं कला*', मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, 2018. पृष्ठ-8,

10- उपाध्याय, यू एन; एवं गौतम तिवारी, '*भारतीय स्थापत्य एवं कला*', मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, 2018, पृष्ठ - 9

11- ऋग्वेद, I.32.2

12- जातक 1,पृष्ठ-29, उद्धृत- यू. एन. उपाध्याय, वही,पृष्ठ- 10

13- उपाध्याय, यू एन; एवं गौतम तिवारी, वही, पृष्ठ- 10

14- ऋग्वेद, X. 34. 10-11

15- अग्रवाल वासुदेव शरण, '*भारतीय कला*' , वही, पृष्ठ संख्या- 51

16- अग्रवाल वासुदेव शरण, '*भारतीय कला*', वही, पृष्ठ संख्या- 51

17- अग्रवाल वासुदेव शरण, '*भारतीय कला*', वही, पृष्ठ संख्या- 51

18- बाजपेई, के. डी., '*भारतीय वास्तु कला का इतिहास*', , उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ, 2015. पृष्ठ संख्या- 39

19- ऋग्वेद 7. 88.5, सहस्त्र द्वारम

20- अग्रवाल वासुदेव शरण,'*भारतीय कला*', पृष्ठ संख्या- 48,

21- अग्रवाल पृथ्वी कुमार, '*भारत प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु*', विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2014. पृष्ठ संख्या- 52,

22- अग्रवाल पृथ्वी कुमार, '*भारत प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु*', पृष्ठ संख्या- 63.

23- राय उदय नारायण, '*भारतीय कला*', लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2019, पृष्ठ संख्या -48

24- ऋग्वेद, VII.85.6

25- ब्राउन पर्सी, *'इंडियन आर्किटेक्चर बुद्धिस्ट एंड हिंदू',* बॉम्बे,1965.पृष्ठ संख्या-3-4

26- अथर्ववेद, IX.3.17

27- अथर्ववेद, IX.3.24

28- भट्टाचार्य तारा पद,'*एन स्टडी ऑन वास्तु विद्या*', पृष्ठ संख्या-13-14, उद्धृत- के डी बाजपेई, वही, पृष्ठ संख्या- 40.

29- अग्रवाल पृथ्वी कुमार, '*प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु*', पृष्ठ संख्या- 53,

30- अग्रवाल पृथ्वी कुमार, '*प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु*', पृष्ठ संख्या- 54.